मानुषी अंग तथा स्वास्थ्य

मानुषी अङ्ग तथा स्वास्थ्य

संयुक्त प्रदेश के वर्नाक्यूलर स्कूलों के अध्यापकों तथा
नार्मल स्कूलों के विद्यार्थियों के लिए

के० सी० भट्टाचार्य्य, एम० एस-सी०, एल० टी०,
प्रोफ़ेसर, ट्रेनिंग कालेज, इलाहाबाद ने बनाया

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

१९२१ क़ीमत ।||)

मानुषी अङ्ग तथा स्वास्थ्य

संयुक्त प्रदेश के वर्नाक्यूलर स्कूलों के अध्यापकों तथा
नार्मल स्कूलों के विद्यार्थियों के लिए

के० सी० भट्टाचार्य्य, एम० एस-सी०, एल० टी०,
प्रोफ़ेसर, ट्रेनिंग कालेज, इलाहाबाद ने बनाया

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद

१९२१

लिए मानसिक काम के समय में जितनी शीघ्रता से निकम्मे अंश उत्पन्न होते हैं उतनी शीघ्रता से अशुद्ध वायु में परिवर्त्तित होकर निकलते नहीं। परिणाम यह होता है कि शरीर में निकम्मे अंश अधिक एकत्रित होते जाते हैं और रुधिर में मिल कर उसको धीरे धीरे मैला तथा निकम्मा बनाते रहते हैं। इससे शरीर के भिन्न भिन्न अंग क्रमशः बलहीन हो जाते हैं और अपने काम को करने के योग्य नहीं रह जाते। कारण यह है कि इन अङ्गों के पुष्ट करने के लिए शुद्ध रुधिर पर्याप्त परिमाण में नहीं पहुँचता। इसका फल यह होता है कि विद्यार्थी की छाती बलहीन हो जाती है। पेशियाँ नर्म तथा पिलपिली पड़ जाती हैं, भूक नहीं लगती और दिल तथा फेफड़े भी निर्बल हो जाते हैं और वह मनुष्य किसी मानसिक अथवा शारीरिक काम को देर तक करने के योग्य नहीं रहता और धीरे धीरे मानसिक और शारीरिक निर्बलता में ग्रसित हो जाता है। इसलिए इस बात का ध्यान रखना बहुत आवश्यक है कि निकम्मे अंश लड़कों के शरीर में बहुत देर तक रहने न पावें।

जो निकम्मे अंश मानसिक काम के समय में शरीर के भीतर इकट्ठे हो जाते हैं उनको उचित व्यायाम के द्वारा शरीर के बाहर निकाल सकते हैं।

यहाँ यह प्रश्न उठता है कि व्यायाम से भी तो शरीर में निकम्मे अंश उत्पन्न होते हैं, किन्तु इससे जितने उत्पन्न होते हैं उससे अधिक निकल जाते हैं। व्यायाम से पसीना अधिक

आता है और बहुत से निकम्मे अंश इसके साथ शरीर से निकल जाते हैं। साँस भी जल्दी जल्दी और बड़ी बड़ी लेनी पड़ती हैं इससे निकृष्ट वायु का बहुत सा भाग निकल जाता है।

इस प्रकार व्यायाम के द्वारा हम केवल उन निकम्मे अंशों को ही नहीं निकाल देते जो इससे उत्पन्न होते हैं वरन इसके पूर्व जितने निकम्मे अंश मानसिक काम के समय एकत्रित हो गये थे वह भी निकल जाते हैं।

व्यायाम के समय जब साँस परिमाण से अधिक गहरी लेनी पड़ती है और जल्दी जल्दी लेनी पड़ती है, तो केवल निकृष्ट वायु ही अधिक परिमाण में फेफड़ों से नहीं निकलती वरन शुद्ध वायु भी उनमें पहिले से कहीं अधिक परिमाण में आने लगती है और इस प्रकार रुधिर शीघ्रता से शुद्ध होने लगता है। रुधिर का सञ्चार शीघ्रता से होने लगता है जिसका फल यह होता है कि भिन्न भिन्न अङ्गों की पुष्टि तथा पालन-पोषण के लिए स्वच्छ रुधिर अधिक परिमाण में पहुँचना आरम्भ हो जाता है, जिससे शरीर के नष्ट हुए अंशों की कमी शीघ्रता से पूर्ण हो जाती है, और वह अधिक पुष्ट होकर अपने काम को भली भाँति करने के योग्य बन जाते हैं। इस प्रकार दिल, छाती और शरीर के अन्य भागों की पेशियाँ अधिक पुष्ट हो जाती हैं। मानसिक शक्तियों में बल आ जाता है, भूख तथा पाचन-शक्ति बढ़ जाती है। सारांश यह है कि नित्य के व्यायाम से शरीर तथा मस्तिष्क दोनों की शक्तियाँ पुष्ट और बलवान् हो जाती हैं।

प्रत्येक भाँति के मानसिक काम तुम जानते ही हो कि बड़े मस्तिष्क के द्वारा होते हैं और व्यायाम तथा अन्य शारीरिक कार्य्य छोटे मस्तिष्क के आश्रय से पूर्ण होते हैं। इसलिए यदि कोई बालक किसी खेल अथवा व्यायाम में सम्मिलित होता है तो इससे उसके बड़े मस्तिष्क को जो घर और पाठशाला में बराबर परिश्रम करने से थक जाता है कुछ विश्राम मिलता है।

पाठशालाओं में व्यायाम किसी न किसी रूप में अवश्य होना चाहिए। व्यायाम कई भाँति के होते हैं जैसे भिन्न भिन्न प्रकार के खेल, दौड़, ड्रिल, कुश्ती तथा डंड बैठक। परन्तु हमारी पाठशालाओं के लिए ड्रिल और भिन्न भिन्न प्रकार के खेल, दौड़ना और कूदना इत्यादि अधिक उचित हैं।

इस अवसर पर ड्रिल का अधिक वर्णन करने की आवश्यकता नहीं क्योंकि इस विषय पर शिक्षा-विभाग ने पाठशालाओं के लिए एक छोटी सी किन्तु लाभदायक पुस्तक नियत कर दी है जिसमें वह सम्पूर्ण व्यायाम जो लड़कों के लिए आवश्यक हैं लिखे हुए हैं और उनके सिखाने की विधि भी दी हुई है।

अब हम उन भिन्न भिन्न प्रकार के खेलों का वर्णन करेंगे जो लड़कों के लिए अति लाभदायक हैं किन्तु इनमें से कुछ पर अधिक धन व्यय होता है और कदाचित् इस कारण से वर्नाक्यूलर स्कूलों के लिए उचित नहीं है। परन्तु **फ़ुट-बाल** पर और खेलों की अपेक्षा अधिक धन व्यय नहीं होता, इसलिए यह बड़े वर्नाक्यूलर स्कूलों के लिए उचित

है। भिन्न भिन्न प्रकार की दौड़ तथा कूदना फाँदना भी लड़कों के लिए परम उपयोगी हैं और जहाँ तक सम्भव हो इनके लिए बालकों को उत्साह देना चाहिए।

प्रत्येक अध्यापक का यह धर्म है कि वह बालकों के साथ खेल में सम्मिलित हो अथवा प्रबंधकर्ता बने या न्यायकर्ता का कार्य्य करे। अध्यापक के उपस्थित रहने से खेलों में सभ्यता बनी रहती है। इसके अतिरिक्त अध्यापक और उसके शिष्यों में स्नेह तथा उत्तम सम्बन्ध उत्पन्न हो जाते हैं।

इस बात का ध्यान रखना भी अत्यावश्यक है कि लड़के किसी प्रकार का व्यायाम सीमा से अधिक न करें। यदि कोई लड़का ऐसा करेगा तो वह बहुत थक जायगा और कोई काम न कर सकेगा और उसके दिल तथा फेफड़ों और अन्य सब अङ्गों को अपने अपने काम शीघ्रता से करने पड़ेंगे और काम के अधिक भार के कारण वह धीरे धीरे निर्बल होते जायँगे। अतएव अध्यापक को चाहिए कि भिन्न भिन्न श्रेणी के लड़कों के लिए भिन्न भिन्न प्रकार के व्यायाम चुने जैसा कि शिक्षा-विभाग ने भी नियत कर दिये हैं।

अध्यापक को इस बात का भी अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि छोटे लड़के बहुत देर तक व्यायाम न करते रहें क्योंकि इसका फल भी वही होगा जो सीमा से अधिक व्यायाम करने से होता है।

व्यायाम चाहे किसी प्रकार का हो सदा बाहर खुले मैदान

में और शुद्ध और स्वच्छ वायु में होना चाहिए। केवल इसी दशा में लड़कों को व्यायाम से लाभ पहुँच सकता है। यदि वायु अशुद्ध तथा मैली होगी अथवा धूल तथा मिट्टी से भरी होगी तो मिट्टी के छोटे छोटे कण और अनेक प्रकार के मैल उनके फेफड़ों में पहुँचेंगे जिससे उनका रुधिर स्वच्छ होने के बदले मैला हो जायगा और उनको पुष्ट करने के बदले रोगी बना देगा। अतएव ऐसी वायु का प्रभाव उनके शरीर तथा मस्तिष्क दोनों पर बहुत बुरा होगा।

तीसरा अध्याय

आँख तथा कान की रक्षा

प्रत्येक अध्यापक को यह जानना चाहिए कि अपने विद्यार्थियों की आँखों तथा कानों की रक्षा किस प्रकार करनी चाहिए। हम पहिले बता चुके हैं कि दूर की वस्तुओं की छाया आँख के भीतरी पर्दे पर आँख के शीशे के द्वारा ठीक उसी प्रकार पड़ती है जिस प्रकार आतिशी शीशे के द्वारा सफ़ेद काग़ज़ पर पड़ती है। यदि किसी समीप की वस्तु की छाया आतिशी शीशे के द्वारा सफ़ेद काग़ज़ पर डाली जाय तो वह उस स्थान पर नहीं पड़ेगी जहाँ पर कि दूर की वस्तु की छाया पड़ती है। इसलिए यदि हम चाहें कि उसकी छाया पर्दे पर स्पष्ट पड़े तो पर्दे को शीशे से कुछ दूर पीछे हटाना चाहिए और यदि पर्दा अपने स्थान पर ही रक्खा रहे तो पहले रक्खे हुए शीशे के द्वारा छाया स्पष्ट नहीं पड़ेगी। उस दशा में हम यह कर सकते हैं कि उस शीशे को हटा कर उसके स्थान में उससे मोटा शीशा रख कर देखें कि उसके द्वारा पर्दे पर छाया स्पष्ट पड़ती है या नहीं; यदि नहीं पड़ती तो उसे भी हटा कर और मोटा शीशा लगावें, यहाँ तक कि और भी अधिक मोटाई-वाले कई शीशों से एक दूसरे के बाद अन्दाज़ करते करते कोई

न कोई शीशा ऐसा निकल आवेगा कि जिसके द्वारा पर्दे पर छाया स्पष्ट पड़ेगी । यदि वस्तु और भी निकट लाई जाय तो और भी मोटे शीशे के प्रयोग करने की आवश्यकता पड़ेगी । यह सब बातें भली भाँति उस समय समझ में आ जायेंगी जब अध्यापक वैज्ञानिक रीति से उनका प्रयोग करके समझायेगा ।

अब हम यह ज्ञात करेंगे कि जिस समय हम किसी पास की वस्तु की ओर देखते हैं तो हमारी आँखों पर क्या प्रभाव पड़ता है । इस दशा में छाया आँख के पर्दे के पीछे पड़ती है और पर्दा चूंकि आँख के शीशे से दूर पीछे की ओर नहीं हटाया जा सकता इसी लिए आँख के शीशे की मुटाई बढ़ जाती है और निकट की वस्तु की छाया आँख के पर्दे पर पड़ जाती है । वस्तु जितनी पास अधिक होगी उतनी ही उस शीशे की मुटाई अधिक होगी । यदि हम फिर किसी दूर की वस्तु को देखें तो शीशा पतला होकर अपनी वास्तविक मुटाई पर आ जाता है ।

आँख के शीशे की मुटाई में यह परिवर्तन आँख की बहुत सी सूक्ष्म भीतरी पेशियों के द्वारा होता है । प्रत्येक बार जब शीशा अपनी मुटाई बदलता है तो इन पेशियों और आँख के शीशे पर एक प्रकार का बोझ पड़ता है । यदि किसी लड़के को काग़ज़ या पुस्तक अपनी आँखों के बहुत समीप रख कर अधिक समय तक लिखना या पढ़ना पड़े तो उसकी आँखों के शीशों तथा उन पेशियों पर जो इनसे सम्बन्ध रखती हैं और

पर्दे से मिली हुई हैं अधिक बोझ पड़ेगा और कोई आश्चर्य नहीं कि इससे उसके सिर तथा आँखों में पीड़ा होने लगे ।

लड़कों को काग़ज़, स्लेट अथवा पुस्तक इत्यादि को बहुत ही निकट रख कर कुछ समय तक काम करना एक और प्रकार से भी हानिकारक है । जब कोई वस्तु आँख के अत्यन्त समीप रख कर देखी जाती है तो केवल आँख का शीशा ही मोटा नहीं हो जाता बरन दोनों आँखें भी एक दूसरे की ओर खिँच जाती हैं । यह काम उन पेशियों के द्वारा होता है जो आँख के बाहरी सफ़ेद पर्दे से जुड़ी हुई होती हैं । इनका वर्णन हम पहिले भाग के सातवें अध्याय में कर चुके हैं । जिस समय यह दोनों आँखें खिँचती हैं तो यह बाहर का सफ़ेद पर्दा भी इन पेशियों के द्वारा तन जाता है । यह सफ़ेद पर्दा जो युवकों की आँखों में कड़ा होता है, बच्चों की आँखों में अत्यन्त कोमल और नर्म होता है ।

यदि बचपन में पास की वस्तुओं को लगातार देर तक देखने से इस कोमल और नर्म पर्दा पर अधिक खिँचाव पड़ता रहे तो आँख लम्बी सी हो जाती है और आँख का शीशा और उसके पीछे के पर्दे का अन्तर बढ़ जाता है । इस दशा में दूर की वस्तुओं की स्पष्ट छाया इस पर्दे पर बनने के बदले सामने की ओर उसके और आँख के पर्दे के मध्य में कहीं पर बन जाती है । जो छाया इस दशा में पर्दे पर पड़ती है वह स्पष्ट नहीं होती और इसलिए दूर की वस्तु स्पष्ट नहीं दिखाई देती । ऐसी आँखों से केवल दूर की वस्तुयें सदा धुँधली दिखाई देती हैं ।

इन्हीं उपर्य्युक्त कारणों से परमावश्यक है कि दस ग्यारह वर्ष की आयु तक बच्चे काग़ज़, स्लेट या पुस्तक इत्यादि आँखों के अति समीप रख कर लिखने पढ़ने से अपनी आँखों को नष्ट न करें।

जितना ही शीघ्र बच्चे इस प्रकार समीप से लिखने पढ़ने का कार्य आरम्भ करते हैं उतना ही उनकी आँखों को अधिक हानि पहुँचने का भय रहता है।

उचित है कि लिखने पढ़ने के पाठ जिनमें आँखों को समीप रखने की आवश्यकता पड़ती है बड़े न हों। विद्यार्थियों को चाहिए कि लिखते पढ़ते समय सदैव पुस्तक को आँखों से कम से कम एक फुट की दूरी पर रक्खें।

पढ़ाई के कमरे सदैव भली भाँति प्रकाशित होने चाहिएँ जिससे लड़कों को अपनी पुस्तकें आँखों के बहुत समीप लाने की आवश्यकता न पड़े और उचित दूरी से पढ़ सकें। परन्तु इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि प्रकाश कदापि लड़कों के सामने से न आये क्योंकि इससे उनकी आँखों में चकाचौंध होने लगेगा। अध्यापक को उचित है कि लड़कों को इस प्रकार बिठाये कि अधिकतर प्रकाश उनकी बाईं ओर से आये जिस प्रकार कि पहिले बता दिया गया है। इसके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि छोटे लड़कों के पढ़ने की पुस्तकें बड़े बड़े अक्षरों में छपी हों और भिन्न भिन्न अक्षर भली भाँति पृथक् पृथक् हों। काग़ज़ का रंग सफ़ेद और अक्षरों का काला होना चाहिए क्योंकि और सब रंग आँखों के लिए हानिकारक हैं। लड़कों को

भी उचित है कि लिखते समय सफ़ेद काग़ज़ और काली स्याही का प्रयोग करें और लाल तथा नीले रङ्ग का प्रयोग कदापि न करें।

इसके अतिरिक्त इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि बच्चे लिखना सीखने के आरम्भ में बहुत छोटे छोटे अक्षर न लिखें।

अध्यापक को भी चाहिए कि श्याम पट पर लिखते समय सुन्दर और ऐसे बड़े बड़े अक्षरों में लिखे कि जो लड़के कमरे में सबसे पिछली पंक्ति में बैठे हों वह भी सुगमता से पढ़ सकें।

जब भूगोल पढ़ाते समय नक़शे का प्रयोग किया जाय उस समय भी अध्यापक को देख लेना चाहिए कि नक़शे पर वे बातें जिनकी आवश्यकता नहीं है छोटे अक्षरों में न छापी गई हों, केवल वही बातें होनी चाहिएँ जो लड़कों के लिए आवश्यक हैं।

यदि इतनी सावधानी रखने पर भी किसी लड़के की आँख बल-हीन हो तो उसके घरवालों को शीघ्र ही इसकी सूचना देनी चाहिए, जिससे वे उसकी औषध के लिए किसी अस्पताल में अथवा किसी वैद्य के पास ले जायँ।

अतः अध्यापक को ऐसे लड़कों का पता अवश्य लगाना चाहिए जिनकी दृष्टि बल-हीन हो क्योंकि यदि कोई बुराई हो तो औषध द्वारा दूर कर दी जाये।

दृष्टि की निर्बलता की बहुत सी पहिचानें स्पष्टतः विदित हैं। श्याम पट पर लिखे हुए शब्द या दीवार पर लटकाये हुए नक़शे स्पष्ट दिखाई नहीं देते और उनको स्पष्ट रूप से देखने का उद्योग

करने में आँखें कुछ बन्द हो जाती हैं और भौंहें सिमिट कर एक दूसरे से आ मिलती हैं। कुछ देर तक लिखने पढ़ने में सिर में पीड़ा और आँखों में जलन उत्पन्न हो जाती है और प्रायः आँखें लाल होकर फूल जाती हैं।

हर एक अध्यापक को अपने शिष्यों के कानों की रक्षा करना भी उसी प्रकार आवश्यक है जिस प्रकार कि आँखों की। कान भी बहुत ही कोमल अङ्ग हैं और उनमें कोई चोट पहुँच जाने से सदैव के लिए बहरे हो जाने का भय रहता है।

लड़कों के कान खींचना या कानों पर मारना प्रत्येक दशा में अनुचित है क्योंकि सम्भव है कि कान के पर्दे के पीछेवाली छोटी छोटी हड्डियों के क्रम को ऐसी चोट पहुँच जाय जिससे श्रवण-शक्ति कुछ या पूर्णतया नष्ट हो जाय।

इसके अतिरिक्त और भी ऐसे कारण हैं जिनसे श्रवण-शक्ति को हानि पहुँचती है। अतः सम्भव है कि प्रत्येक कक्षा में कुछ लड़के ऐसे हों जो किसी न किसी कारण से कम सुनते हों। ऐसे विद्यार्थी तीव्र बुद्धिवाले और चतुर भी हों तो भी अध्यापक उनके न सुनाई देने के दोष से अनभिज्ञ होने के कारण उनको मन्दबुद्धि-वाला तथा बे परवाह समझ लेते हैं यद्यपि उन लड़कों की यह दशा उनके किसी अपराध के कारण से नहीं बरन् उन कारणों से है जिनका उन पर कुछ अधिकार नहीं है। इसलिए कम सुनने के कारणों को कुछ जानना प्रत्येक अध्यापक के लिए अत्यावश्यक है जिससे वह यह ज्ञात कर सके कि लड़का

वास्तव में मन्द बुद्धिवाला है या केवल कम सुनने के दोष से ऐसा जान पड़ता है ।

प्राय: बाहिरी नली में अधिक मैल के एकत्र हो जाने के कारण सुनाई देना बन्द हो जाता है क्योंकि ऐसी दशा में कोई शब्द कान के पर्दे तक नहीं पहुँचता । कान का मैल प्राय: नखों और क़लम इत्यादि अथवा और किसी नोकीली वस्तु द्वारा निकालते हैं, परन्तु विद्यार्थियों को यह बात भली भाँति समझा देनी चाहिए कि वे किसी दशा में डाक्टर के अतिरिक्त किसी और मनुष्य को अपने कानों में कोई नोकीली वस्तु न डालने दें क्योंकि सम्भव है कि इससे कान का पर्दा फट जाय जो फिर कदापि ठीक नहीं हो सकता ।

कानों का मैल निकालने और बहरेपन को दूर करने के लिए सबसे उत्तम रीति यह है कि रात को मीठे तेल के थोड़े से बूँद कान में डाल दें और रात भर कान में रुई का फाहा लगाये रहें, तत्पश्चात् पिचकारी द्वारा गर्म पानी से धोवें तो मैल स्वयं निकल जायगा ।

जब किसी अध्यापक को यह ज्ञात हो जाय कि उसके शिष्यों में से किसी के कान से पीब बहती है तो उसको शीघ्र ही लड़कों के माता-पिता को इस बात की सूचना देनी चाहिए, क्योंकि सम्भव है कि इससे बढ़ते बढ़ते मस्तिष्क में फोड़ा उत्पन्न हो जाये और वह प्राणघातक बन जाये ।

चौथा अध्याय

मानसिक थकावट

इसके पूर्व बतलाया गया है कि प्रत्येक काम में चाहे वह शारीरिक हो अथवा मानसिक शरीर के कुछ अंश अवश्य व्यय होते रहते हैं। अतएव जब लड़कों को पाठशाला में चार पाँच घंटों तक नई नई बातें सीखने और समझने में लगातार उद्योग करना पड़ता है तो उनके शरीर और विशेषकर मस्तिष्क में बहुत सा निकम्मा अंश उत्पन्न हो जाता है। यद्यपि निकम्मे भाग मस्तिष्क की धमनियों में बहनेवाले रुधिर के द्वारा सदैव निकलते रहते हैं तो भी जैसा कि दूसरे अध्याय में वर्णन हो चुका है उत्पन्न होते ही नहीं निकल जाते और इस-लिए शरीर में लगातार एकत्रित होते रहते और धीरे धीरे रुधिर को मैला और निकम्मा बनाते रहते हैं।

अब यह निकम्मा रुधिर न तो मस्तिष्क ही के और न शरीर ही के अन्य भागों से निकम्मे अंश को निकाल सकता है और न उनका उचित रीति से पालन पोषण कर सकता है। इसलिए मस्तिष्क धीरे धीरे बलहीन हो जाता है और इसके थक जाने से

निर्बलता तथा आलस्य विदित होने लगता है। एक ही समय में मस्तिष्क से अधिक काम लेना मानसिक थकावट का मुख्य कारण है।

जब रुधिर मैला और निकम्मा हो जाता है तो मस्तिष्क और मानसिक शक्तियों में निर्बलता उत्पन्न हो जाती है, अतएव जब पढ़ाई के कमरों से अशुद्ध वायु के निकलने और उसके बदले में स्वच्छ वायु के आने के लिए कोई मुख्य प्रबन्ध नहीं होता तो रुधिर स्वच्छ नहीं होता और इससे मस्तिष्क बलहीन हो जाता है और थकावट उत्पन्न हो जाती है।

इसी कारण से अच्छी तरह न सोने और व्यायाम के न करने से भी थकावट विदित होती है। यथोचित और बलवर्द्धक भोजन जो मस्तिष्क और शरीर के अन्य भागों के व्यय हुए अंश की पूर्ति करता है प्राप्त न होने के कारण मस्तिष्क में निर्बलता उत्पन्न हो जाती है।

भोजन करने के पश्चात् उचित विश्राम के न करने से भी प्रायः मस्तिष्क में थकावट उत्पन्न हो जाती है, क्योंकि भोजन करने के पश्चात् मस्तिष्क को बहुत ही कम रुधिर प्राप्त होता है। भोजन करते ही पाकाशय और आँतों की गति भोजन को पचाने के लिए बहुत तीव्र हो जाती है, अतः इस गति से शरीर के इन भागों में निकम्मे अंश बहुत उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिए उन निकम्मे अंशों को निकालने के लिए अधिक रुधिर की आवश्यकता होती है। यही कारण है कि भोजन करने के पश्चात् मस्तिष्क को

पर्याप्त रुधिर नहीं मिलता, अतः यदि भोजन करते ही मस्तिष्क से अधिक काम लिया जाय तो न वह अपने निकम्मे अंश से स्वच्छ हो सकता है और न अपनी उन्नति के लिए पर्याप्त और स्वच्छ रुधिर प्राप्त कर सकता है। अतएव भोजन करने के पश्चात् आध घंटे तक मस्तिष्क से कुछ काम न लेना चाहिए।

जब लड़के थक जाते हैं तो ऐसी उत्तम रीति से काम नहीं कर सकते जिस प्रकार कि वह पहले कर सकते थे। ऐसी दशा में वह न कोई अच्छे काम करने के योग्य होंगे और न पाठशाला के काम से कुछ लाभ उठा सकेंगे।

इसलिए पाठशाला का काम ऐसा होना चाहिए कि लड़कों का मस्तिष्क पूर्णतया थक न जाय। अतः थकावट की साधारण पहिचान के विषय में कुछ न कुछ जानना प्रत्येक अध्यापक के लिए अत्यन्त आवश्यक है जिससे वह थके हुए लड़कों से बहुत परिश्रम न कराये नहीं तो इसका परिणाम बहुत बुरा होगा।

बहुत सी ऐसी पहिचाने हैं जिनके द्वारा जानकर अध्यापक विदित कर सकता है कि लड़के वास्तव में काम से थक गये हैं या नहीं। जैसे जब कोई लड़का थक जाता है तो उसका सिर प्रायः सामने या एक ओर को झुक जाता है और एक ही स्थान पर चुपचाप बैठने और जो कुछ हो रहा हो उस पर ध्यान देने के योग्य नहीं रहता। कक्षा में सोना या अगड़ाइयाँ लेना लड़कों की मानसिक थकावट की दो बड़ी पहिचाने हैं।

यदि अध्यापक इन पहिचानों पर कुछ ध्यान न दें तो

लड़कों के मस्तिष्क पर अधिक बोझ पड़ने से केवल उनके मस्तिष्क ही पर नहीं बरन् सम्पूर्ण शरीर पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ता है। चूँकि रुधिर धीरे धीरे निकम्मे अंश को मस्तिष्क से लेकर निकम्मा हो जाता है और शरीर में सञ्चार करता हुआ निकम्मे अंश को शरीर के प्रत्येक भाग में पहुँचा देता है, इसलिए मस्तिष्क और शरीर के अन्य भाग निकम्मे अंश से न स्वच्छ हो सकते हैं और न उनके व्यय हुए अंश की पूर्ति के लिए उचित भोजन प्राप्त कर सकते हैं। परिणाम यह होता है कि मस्तिष्क और शरीर अपनी उन्नति से वञ्चित रह जाते। और विद्यार्थियों को केवल मानसिक निर्वलता ही नहीं होती बरन् बल भी घट जाता है। कारण यह है कि मानसिक निर्बलता की दशा में शारीरिक उन्नति होना तथा शारीरिक निर्बलता की दशा में मानसिक उन्नति करना दोनों असम्भव हैं।

विद्यार्थियों का मानसिक थकावट से बचाने के लिए अध्यापक को चाहिए कि पाठशाला के काम के घंटे इस क्रम से रक्खे कि बालकों को एक ही समय में लगातार बहुत सा मानसिक काम न करना पड़े।

पाठ को ध्यानपूर्वक पढ़ने और चित्त को एकाग्र करके उसको याद करने का समय भिन्न भिन्न अवस्था के बालकों के लिए भिन्न भिन्न लम्बाई का होना चाहिए। दस बारह वर्ष तक के लड़के किसी पाठ पर एक ही समय में आध घंटे से अधिक

लगातार ध्यान नहीं दे सकते। किसी दशा में किसी पाठ का समय ४५ मिनट से अधिक नहीं रखना चाहिए।

इसके अतिरिक्त बालकों से पाठशाला में चार पाँच घंटों तक लगातार काम लेना भी बड़ी भूल है। बीच में कम से कम १५ मिनट की छुट्टी होनी चाहिए और इस छुट्टी में लड़के अपनी अपनी कक्षाओं के कमरों में न बैठे रहें बरन् बाहर खुले मैदान में जाकर खेलें कूदें। इससे उनकी थकावट तथा आलस्य दूर हो जायगा और वह पाठशाला के शेष समय में अपने पाठों पर भली भाँति ध्यान लगा सकेंगे।

पहिले घंटे और फिर छुट्टी के पश्चात् के घंटे में बालकों में मानसिक थकावट नहीं होती है अर्थात् वह चैतन्य रहते हैं। इसलिए गणित, भाषा इत्यादि जिनमें अधिक ध्यान देने और सोचने की आवश्यकता होती है इन्हीं घंटों में जहाँ तक सम्भव हो पढ़ाना चाहिए। शेष घंटों में व्यायाम करना, लिखना तथा ड्राइंग इत्यादि सिखाना चाहिए। कारण यह है कि इन विषयों में अधिक मनन करने की आवश्यकता नहीं होती।

बालकों को बहुत समय तक एक ही प्रकार के काम में लगाये रखना अनुचित है, जैसे गणित और भाषा के घंटों का एक दूसरे के पीछे होना अच्छा नहीं है। कारण यह है कि इन दोनों में अधिक ध्यान देने और विचारने की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार इतिहास तथा भूगोल के घंटे जिनमें स्मरण-शक्ति का अधिक काम पड़ता है अथवा लिखने और ड्राइंग के घंटे जिनमें

अधिकतर हाथ से काम लिया जाता है लगातार आ जायँ तो बड़ी हानि होगी।

मानसिक थकावट से बचने के लिए उपर्युक्त यत्न करने पर भी लड़के चार पाँच घंटों तक पाठशाला में लगातार काम करने से थक जाते हैं। उनको फिर सचेत करने तथा फिर काम करने के लिए उद्यत करने के हेतु उनसे व्यायाम कराना अति-आवश्यक है। अतः सब लड़कों को किसी न किसी प्रकार के व्यायाम में सम्मिलित होना चाहिए जिससे थकावट दूर होकर वह सम्पूर्ण काम भली भाँति कर सकें जो उनके अध्यापकों ने घर पर करने के लिए दिया हो।

प्रत्येक अध्यापक का धर्म है कि बालकों को घर पर काम करने के लिए जो काम दे उसमें उनकी अवस्था तथा योग्यता का ध्यान रक्खे, अर्थात् उस काम को भली भाँति सोच विचार कर दे। छोटी कक्षा के लड़कों को घर पर काम करने के लिए कुछ न दे और बड़ी कक्षा के लड़कों को केवल दो घंटे का काम दे।

———

पाँचवाँ अध्याय

साधारण सङ्क्रामक रोग

हम पिछले अध्यायों में बता चुके हैं कि व्यायाम न करने से तथा सीमा से अधिक मानसिक काम लेने के कारण पाठ-शाला के विद्यार्थियों का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है।

भिन्न भिन्न प्रकार के रोगों से भी उनका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। इनके स्वास्थ्य को हानि पहुँचने का भय विशेषकर ऐसे रोगों से होता है जो फैलनेवाले हैं।

इन सङ्क्रामक रोगों में से कुछ तो ऐसे हैं जो रोगियों को छूने से अथवा उनके वस्त्र के स्पर्श से फैल जाते हैं और शेष सब रोग वायु और खाने पीने की वस्तुओं के द्वारा लग जाते हैं। हमारे देश के साधारण सङ्क्रामक रोग ख़सरा, चेचक, शीतला, कूकर-खाँसी, प्लेग, हैज़ा, आँखों का सूजना, दाद तथा खुजली हैं।

जब इन फैलनेवाले रोगों में से कोई रोग किसी पाठशाला के आस पास फैला हुआ जान पड़े अथवा पाठशाला के किसी लड़के पर यह शंका हो कि वह इसमें ग्रसित हो गया है, तो

प्रत्येक अध्यापक का धर्म है कि वह ऐसे रोग को और बालकों में लग जाने से रोके ।

अध्यापक का केवल यही धर्म नहीं है कि बालकों की मानसिक शक्तियों की उन्नति करे, वरन् यह भी है कि उनके शरीर तथा स्वास्थ्य का भी ध्यान रक्खे । इसके लिए उसको साधारण फैलनेवाले रोगों के कारण तथा उनके चिह्न थोड़े बहुत जानना आवश्यक है जिससे वह इन रोगों को बालकों में फैलने से रोक सके ।

इन रोगों में से अधिकांश बहुत छोटे छोटे कीड़ों के द्वारा उत्पन्न होते हैं । यह कीड़े इतने छोटे होते हैं कि एक इंच लम्बी रेखा में लगभग दस सहस्र समा सकते हैं । यह कीड़े प्रायः वायु, भोजन, तथा जल में पाये जाते हैं और इसलिए साँस लेते और खाते पीते समय वह सुगमता से रुधिर में जा मिलते हैं । जब कोई लड़का किसी ऐसे गृह से आता है जिसमें कोई छूत का रोग है तो अवश्य वह कपड़ों तथा किताबों के साथ कुछ न कुछ ऐसे कीड़े पाठशाला में ले आता है । जब यह कीड़े कमरे में वायु के द्वारा फैल जाते हैं तो दूसरे लड़के साँस लेते समय उनमें से कुछ न कुछ अपने फेफड़ों में ले लेते हैं । प्रायः इसी प्रकार कीड़े रुधिर में जा पहुँचते हैं ।

रुधिर में पहुँच जाने के पश्चात् ही वह बढ़ने लगते हैं । कुछ समय के पश्चात् उन कीडों में से प्रत्येक के दो कीड़े हो जाते हैं यहाँ तक कि एक दिन में रुधिर के केवल एक बिन्दु में कई

सहस्र कीड़े हो जाते हैं। यह कीड़े प्रायः विषैले तत्त्व उत्पन्न कर देते हैं जो रुधिर में मिल जाने से धीरे धीरे शरीर के भिन्न भिन्न भागों में बुरा प्रभाव डालते तथा अनेक रोग उत्पन्न करते हैं। यही रोग बहुधा ऐसे कठिन हो जाते हैं कि मनुष्य के प्राण हर लेते हैं।

परन्तु किसी सङ्क्रामक रोग के कीड़ों के शरीर में प्रवेश करने के समय से उसके चिह्न के प्रकट होने तक कुछ समय बीत जाता है। यह समय भिन्न भिन्न रोगों के लिए पृथक् पृथक् होता है। इस समय कोई विशेष चिह्न उपस्थित नहीं होते, किन्तु सम्भव है कि मन मलीन रहे तथा चित्त में अशान्ति हो। ऐसी दशा में रोगी को छूने से उसका रोग किसी को नहीं लग सकता और वह अपने साथियों में वह रोग नहीं फैला सकता।

उपर्य्युक्त समय के बीत जाने पर रोगी में रोग के प्रायः सम्पूर्ण चिह्न स्पष्टतः दृष्टिगोचर होते हैं और इसी समय से वह रोग को फैलाने के योग्य हो जाता है। कक्षाओं में लड़के प्रायः एक दूसरे के समीप बैठते हैं इसी लिए वह साँस लेते समय उन कीड़ों को जो रोगी लड़के के शरीर, वस्त्र और पुस्तकों से कमरे की वायु में आकर उड़ते फिरते हैं अपने फेफड़ों में ले जाते हैं।

इसलिए प्रत्येक अध्यापक का धर्म है कि यथाशक्ति अपने बालकों में ऐसे रोगों को फैलने से रोके, किन्तु जब तक वह इन रोगों के कुछ प्रारम्भिक चिह्नों से विज्ञ न हो उसको रोकने में सफलता नहीं प्राप्त होगी।

ख़सरा—यह शीघ्रता से लगनेवाला रोग है और एक प्रकार का ज्वर होता है जिसके साथ ही शरीर पर फुनसियाँ फूट निकलती हैं। यह रोग प्रायः छोटे बालकों को होता है। इसमें ज़ुकाम की भाँति सिर में पीड़ा तथा जाड़ा और छींक के साथ आरम्भ होता है। आँख तथा नाक से जल बहने लगता है। बहुधा कुछ कुछ खाँसी भी होती है तथा आँखें लाल हो जाती हैं तथा कंठ में खुजली सी जान पड़ती है। इनके पश्चात् तीसरे या चौथे दिन पहिले माथे तथा चिहरे पर छोटे छोटे गोल लाल दानों के सदृश फुनसियाँ फूट निकलती हैं। यह रोग फेफड़ों, कंठ और नाक से निकले हुए मैलों के द्वारा एक लड़के से दूसरे तक पहुँचता है।

चेचक—यह भी एक प्रकार का लगनेवाला ज्वर होता है जिसके साथ ही फुनसियाँ निकल आती हैं। यह भी प्रायः लड़कों में होता है। इसके प्रारम्भिक चिह्न सिर तथा कमर में पीड़ा और जाड़ा तथा क़ै हैं। दो तीन दिन के पश्चात् पहिले चिहरे तथा माथे पर लाल दाने निकलते रहते हैं और फिर धड़ तथा दूसरे अङ्गों पर प्रकट होते हैं। यह दाने चार पाँच दिन के पश्चात् एक द्रव पदार्थ से भर जाते हैं, तत्पश्चात् इनमें पीब पड़ जाती है। इसके पश्चात् बारह तेरह दिन व्यतीत होने पर सूखने लगते हैं और दालें सी बन कर धीरे धीरे गिर जाते हैं। साँस और इन दानों के द्वारा यह रोग एक से दूसरे को लग जाता है। कभी कभी यह साधारण रीति से होता है किन्तु बहुधा ऐसा

कठिन तथा कष्ट देनेवाला होता है कि रोगी का प्राण हर लेता है।

शीतला—यह भी एक प्रकार का फुनसियोंवाला ज्वर होता है जो एक से दूसरे को लग जाता है। यह भी प्रायः बालकों ही में होता है, किन्तु चेचक से बहुत हलका होता है, मृत्यु इससे बहुत कम होती है। फुनसियों के फूट निकलने से पूर्व इसके कोई प्रारम्भिक चिह्न प्रकट नहीं होते किन्तु सम्भव है कि सिर की पीड़ा तथा प्यास के सहित हलका सा ज्वर हो। इन लक्षणों के लगभग २४ घंटे पश्चात् फुनसियाँ छोटे छोटे लाल दानों के रूप में पहिले चिहरे पर दिखाई देती हैं और फिर धीरे धीरे सम्पूर्ण शरीर में फैल जाती हैं।

प्रत्येक प्रकार के साधारण ज़ुकाम तथा खाँसी को जिनके साथ कंठ की पीड़ा हो भयानक समझना चाहिए। कारण यह है कि इन पर ध्यान न देने तथा उचित प्रबंध न करने से कंठ तथा साँस की नाली और फेफड़ों से सम्बन्ध रखनेवाले अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। यह रोग प्रायः कंठ और नाक से निकले हुए मैल तथा साँस के द्वारा एक से दूसरे को लग जाते हैं। कूकर-खाँसी एक साधारण सङ्क्रामक रोग है जो इस प्रकार लग जाता है और बालकों को कठिन पीड़ा देता है इससे खाँसते खाँसते अन्त में क़ै आ जाती है और रोगी शिथिल हो ज़ाता है।

प्लेग—आजकल लगभग हिन्दुस्तान के सम्पूर्ण भागों में बहुत ही साधारण सङ्क्रामक रोग है और इसके कारण प्रतिवर्ष

बहुत से मनुष्य मर जाते हैं। सिर में विशेष पीड़ा होना, काँपना, हलका ज्वर, लाल आँखें तथा क़ै इसके प्रारम्भिक चिह्न हैं। बग़ल और गर्दन, तथा जाँघ में गिलटियों का उभड़ आना भी इस रोग की एक विशेष पहिचान है। साधारण रीति से रोगी इन चिह्नों के प्रकट होने के चार पाँच दिन पश्चात् मर जाता है। इस रोग के संक्रामक कीड़े शीघ्र ही खाल अथवा फेफड़ों के रास्ते से शरीर में प्रवेश कर जाते हैं। यह रोग एक स्थान से दूसरे स्थान वायु या चूहों के द्वारा पहुँचता है और इसके अतिरिक्त प्लेग के रोगी तक के कपड़ों और खाने पीने की उन वस्तुओं के द्वारा भी फैलता है जिनको प्लेगवाले चूहों ने उनमें मिला दिया है।

लगातार क़ै और दस्त **हैज़ा** के प्रारम्भिक चिह्न हैं। जो लड़का हैज़े में ग्रसित हो जाता है वह साधारण रीति से इसके प्रारम्भिक चिह्नों के प्रकट होने के समय से इतना निर्बल हो जाता है कि पाठशाला में उपस्थित नहीं हो सकता।

आँख का सूजना—यह भी छोटे बच्चों का बहुत ही साधारण रोग है। इससे पलकों और आँख के मध्य की झिल्ली सूज जाती है। प्रारम्भ में आँख के सामने के भाग और पलकों में जो लाल तथा सूजे हुए विदित होते हैं पीड़ा जान पड़ती है। आँख से जल भी बहता है और रोगी प्रकाश को सहन नहीं कर सकता। यदि प्रारम्भ में इस पर ध्यान न दिया जाय तो जल गाढ़ा और पीला हो जाता है और रात को सोते समय शुष्क हो जाता है और प्रातःकाल तक पलकें परस्पर चिपट जाती हैं।

इस रोग से आँखों को विशेष हानि पहुँच सकती है, क्योंकि सम्भव है कि आँख के भीतरी भागों में सूजन फैल जाय। यह रोग साधारण रीति से हाथ, कपड़े, रूमाल और तौलिया इत्यादि के आँखों से बही हुई वस्तु से छूने के द्वारा फैलता है, यह इतना शीघ्र फैलनेवाला रोग है कि थोड़े ही समय में एक लड़के से सम्पूर्ण कक्षा में फैल जाता है।

खाज और **दाद**—यद्यपि यह बहुत ही कष्टदायक हैं परन्तु जीवन के लिए कदापि भयानक नहीं हैं।

खाज—प्रायः उँगलियों के बीच घाइयों में या शरीर के ऐसे भागों में निकलती है जहाँ खाल कोमल तथा पतली होती है। पहिले पहल यह छोटी छोटी फुनसियों के रूप में होती है जो बहुत छोटे छोटे कीड़ों से उत्पन्न हो जाती है। यह कीड़े खाल के नीचे नीचे फैलते जाते हैं। इस रोग का साधारण चिह्न यह है कि इसमें खुजली सदैव होती रहती है। इस खाज से कभी कभी सूजन हो आती है और बड़े बड़े घाव भी हो जाते हैं।

दाद—यह एक छोटे से गोल वृत्त के रूप में प्रकट होता है। इसमें भी खुजली बहुत उठती है। इसके वृत्त के चारों ओर छोटी छोटी फुनसियों की एक पंक्ति सी बन जाती है। धीरे धीरे यह वृत्त बढ़ता जाता है। यह रोग सिर तथा चिहरे अथवा शरीर के और किसी अन्य भाग में भी हो सकता है। यह भी एक प्रकार का सङ्क्रामक रोग है जो कीड़ों से उत्पन्न होता है। दाद के कीड़े खाज के कीड़ों से भिन्न होते हैं। यह रोग शीघ्रता

से एक से दूसरे को लग जाता है और दाद को छूने तथा रोगी के पास की वायु को साँस के साथ लेने में तथा दादवाले के वस्त्र को छूने अथवा पहिनने से भी उत्पन्न होता है।

इन सङ्क्रामक रोगों को पाठशाला के लड़कों में फैलने से रोकने के लिए भी आवश्यक यह है कि अध्यापक इन रोगों के प्रारम्भिक चिह्नों का ध्यान रक्खे, विशेषकर ऐसे समय में जब कि कोई रोग पाठशाला के सन्निकट किसी गाँव में फैल रहा हो। यदि कोई लड़का किसी सङ्क्रामक रोग से पीड़ित हो तो उसको तुरन्त घर भेज देना चाहिए और उसके माता-पिता को सूचना दे देनी चाहिए जिससे उसकी दवा इत्यादि कराई जाय।

यदि यह शङ्का हो कि कोई लड़का किसी ऐसे रोगी के पास गया अथवा रहा था जो सङ्क्रामक रोग से पीड़ित था तो यद्यपि उस रोग के चिह्न उस बालक में प्रकट न हों, तो भी जब तक उस रोग के कीड़ों के शरीर में प्रवेश करने और उसके पहिले चिह्न दृष्टिगोचर न हो जायँ तब तक उसको पाठशाला में आने और लड़कों से मिलने जुलने से रोकना आवश्यक है। यदि इस समय के बीत जाने पर बालक में उस रोग के चिह्न न प्रकट हों तो यह अनुमान किया जा सकता है कि उसमें उस रोग का कोई कीड़ा उपस्थित नहीं है। अतएव उसको फिर से पाठशाला में आने की आज्ञा देने में कोई भय नहीं है। यदि समय पर रोक थाम न की जाय तो सम्भव है कि पाठशाला के सब लड़कों में यह रोग फैल जाय।

रोग की आशङ्का के कारण किसी बालक को पाठशाला में आने तथा अन्य लड़कों से मिलने जुलने से रोकने का समय सब लगनेवाले रोगों के लिए एक ही सदृश नहीं है। अतः इस समय में जो कि फैलनेवाले कीड़ों के शरीर में प्रवेश होने के पश्चात् प्रारम्भिक चिह्न प्रकट होने के लिए आवश्यक है तीन चार दिन अधिक होना चाहिए। जब किसी लड़के के विषय में यह सन्देह हो कि वह खसरे के किसी रोगी के पास गया या रहा है तो लगभग अठारह दिन तक उसे अलग रखना चाहिए। अलग रखने का समय चेचक के लिए चौदह दिन, सीतला के लिए अठारह दिन, प्लेग के लिए दस दिन और हैज़े के लिए पाँच दिन होना चाहिए। परन्तु यदि कोई लड़का आँख की सूजन या दाद के रोगी के पास गया हो तो उसे बीमारी के चिह्न के प्रकट होने से पहिले अलग नहीं कर सकते, कारण यह है कि इन रोगों के चिह्न इनके कीड़ों के शरीर में प्रवेश होते ही प्रकट हो जाते हैं।

अध्यापकों को यह जानना भी बहुत आवश्यक है कि कब किसी लड़के को किसी सङ्क्रामक रोग से अच्छे होने पर फिर निस्सन्देह पाठशाला आने की आज्ञा दे सकते हैं, जिससे उसके द्वारा दूसरों को उस रोग से ग्रसित होने का सन्देह न रहे। किसी लड़के को खसरे से चङ्गा होने के पश्चात् उस समय तक पाठशाला में लौट न आना चाहिए जब तक कि उसकी खाँसी और नाक बहना बन्द न हो जाय और शरीर पर से लाल चिह्न

लुप्त न हो जायँ। चेचक और शीतला का रोगी चङ्गा होने पर प्रत्येक दाल गिर जाने और शरीर स्वच्छ हो जाने के लगभग दस दिन पश्चात् पाठशाला में फिर से पढ़ने आ सकता है। प्लेग से अच्छा होने पर कम से कम एक महीने पश्चात् फिर पढ़ने आना चाहिए। परन्तु हैज़े के रोग के पश्चात् केवल उस समय फिर से आना उचित है जब भली भाँति बलिष्ठ हो जाय। यदि कोई लड़का आँख के सूजन, खाज या दाद से रोगी हो तो उसे पाठशाला में लौटने की आज्ञा न देना चाहिए जब तक कि वह रोग से भली भाँति चङ्गा न हो जाय।

इन सब प्रयत्नों के करने पर भी सम्भव है कि कोई लड़का किसी सङ्क्रामक रोग से अच्छे होने के पश्चात् भी अपने सहपाठियों से मिलने जुलने के कारण उनमें रोग फैला देवे। जब तक रोग के सङ्क्रामक कीड़े जो उसके शरीर, वस्त्र, बिछौने, पुस्तकों तथा रहने के घर में हो पूर्णतया नष्ट न हो जायँ उसे अलग ही रहना चाहिए। उसके शरीर के सङ्क्रामक कीड़े साधारण कारबोलिक साबुन या सिरके से कुछ दिनों तक बार बार धोने से पूर्णतया मर जाते हैं। परन्तु जो कीड़े वस्त्रों और बिछौने और पुस्तकों में हों उनको नष्ट करने का अच्छा उपाय गर्मी और धूप है। वस्त्र और बिछौनों को खौलते हुए पानी में डाल सकते हैं और पुस्तकों को धूप में फैला सकते हैं। धूप उपर्युक्त रोगों के सङ्क्रामक कीड़ों को सबसे अधिक नष्ट करनेवाली वस्तु है। घर के भीतर के सङ्क्रामक कीड़े पुताई कराने और सब दरवाज़े

और खिड़कियाँ बन्द करके कमरों में गंधक जलाने से नष्ट हो सकते हैं। गंधक का धुआँ रोग के सङ्क्रामक कीड़ों को मार डालने के लिए बहुत ही उपयोगी होता है।

सङ्क्रामक रोगों को पाठशाला के लड़कों में फैलने से रोकने के लिए यह उचित होगा कि लड़कों को कमरे में थूकने से रोका जाय। बहुत से रोग ऐसे हैं जो थूक और नाक से निकले हुए बलग़म से फैलते हैं, इसलिए कमरे में थूकना अथवा नाक साफ़ करना बहुत ही भयानक है। सङ्क्रामक रोगी के शरीर से कीड़े बहुधा उसके थूक और कफ के साथ बाहर निकल आते हैं और जब यह दोनों सूख जाते हैं तो इनके कीड़े वायु में मिल कर इधर उधर उड़ा करते हैं और इस प्रकार अन्य लड़कों में रोग फैला देते हैं। अध्यापक का धर्म है कि बालकों को भली भाँति समझा दे कि वह कमरे में यदि थूकेंगे अथवा नाक साफ़ करेंगे तो उससे भयानक रोग उत्पन्न हो जायँगे।

जब कभी पाठशाला के निकट अथवा सन्निकट किसी गाँव में प्लेग या हैज़ा बहुत वेग से फैला हो तो अध्यापक को चाहिए कि बालकों तथा उनके माता-पिता को भली भाँति समझा दें कि ऐसी दशा में टीका लगवाना अति आवश्यक है, इससे ये रोग रुक जाते हैं। इसी प्रकार चेचक से बचने के हेतु भी टीका लगवाना चाहिए। टीका लगवाने से ये रोग या तो होते ही नहीं या यदि होते हैं तो उनसे मृत्यु का भय नहीं होता।

———

छठा अध्याय

साधारण घटनाएँ

सङ्क्रामक रोगों के अतिरिक्त बालकों पर ऐसी घटनाएँ भी हो जाती हैं जैसे कट जाना, छिल जाना, मोच आना, हड्डी का टूट जाना या अपने स्थान से खिसक जाना, जीव-जन्तुओं तथा कीड़ों का काटना और डसना इत्यादि। इसलिए प्रत्येक अध्यापक को थोड़ा बहुत यह भी जानना चाहिए कि वह ऐसी किसी घटना में किस प्रकार बालकों की सहायता कर सकता है। ऐसी दशा में वास्तव में किसी डाकूर को बुलाना चाहिए कि वह इस दुख को दूर करे क्योंकि यह काम अध्यापक की अपेक्षा डाकूर ही भली भाँति कर सकता है।

कुछ घटनाएँ ऐसी हैं जो विशेष पाठशाला के लड़कों में हो जाती हैं जैसे रुधिर का बहना, खरोंचे लगना, मोच आना, किसी हड्डी का अपने स्थान से खिसक जाना अथवा टूट जाना, जल जाना, डूबना, जीव-जन्तुओं तथा कीड़े-मकोड़ों का काटना और डंक मारना, किसी वस्तु का आँख, कान तथा नाक में घुस जाना।

जब किसी खरांच अथवा घाव से रुधिर धीरे धीरे निकलता हो तो उचित है कि किसी स्वच्छ कपड़े का टुकड़ा कुछ गर्म जल में भिगो कर उससे वह भाग साफ़ करें और घाव को मैल-मिट्टी इत्यादि से शुद्ध करके एक शुद्ध वस्त्र को उबलते हुए जल में भिगो कर उसकी एक गद्दी बना कर घाव पर रक्खें और फिर एक ऐसी पट्टी से जो न अधिक कसी हो तथा न ढीली हो भली भाँति बाँध दे, तो इससे रुधिर का साधारण रूप में बहना बन्द हो जायगा।

फिर रुधिर के बहने की दशा में इस बात का भली भाँति ध्यान रखना चाहिए कि घाव के भीतर किसी प्रकार का मैल अथवा मिट्टी जाने न पाये, क्योंकि यदि यह चले जायँगे तो भिन्न भिन्न प्रकार के रोग जो कीड़ों से उत्पन्न होते हैं लग जायँगे और अनेक प्रकार का कष्ट बालक को देंगे और सम्भव है कि कभी कभी उसका जीवन नष्ट कर देंगे। इसलिए जो जल ऐसे घावों के लिए प्रयोग किया जाय उसको भली भाँति उबाल लेना चाहिए। उबालने से जल के भीतर जो कीड़े होते हैं वे मर जाते हैं।

यदि कोई धमनी या शिरा अकस्मात् कट जाय तो रुधिर अधिक परिमाण में निकलेगा और यदि इसके बन्द करने का उपाय न किया जाय तो सम्भव है कि रोगी मर जाय। धमनी के कट जाने से जो रुधिर निकलता है उसके रोकने की विधि शिरा के कट जाने की विधि से भिन्न होती है। इसलिए

अध्यापक का उचित है कि वह इस बात को भली भाँति जानता हो कि रुधिर शिरा से निकल रहा है या धमनी से।

इसकी पहिचान यह है कि धमनी से जब रुधिर निकलता है तो वह गहिरे लाल रङ्ग का होता है और वेग के साथ उछलता हुआ निकलता है, किन्तु शिरा से जो निकलता है वह धार बँध कर निकलता है और उसका रङ्ग गहरा बैंगनी होता है।

चूँकि धमनियों का रुधिर सदैव दिल से निकल कर शरीर के भिन्न भिन्न भागों में बहता रहता है इसलिए ऐसी दशा में धमनी के उस सिरे को दबाना चाहिए जो दिल से समीपस्थ है, किन्तु शिरा के रुधिर के बन्द करने का ढँग इससे भिन्न होगा। शिरा में जो रुधिर होता है वह दिल की ओर बहता है। ऐसी दशा में शिरा का वह सिरा जो दिल से दूरस्थ है दबाना चाहिए, इससे रुधिर का बहना बन्द हो जायगा।

दबाने का सबसे अच्छा ढँग यह है कि जिस स्थान को दबाना हो उसको डोरी या फीते या तस्मे या रूमाल से भली भाँति कस कर बाँधें, यदि इन वस्तुओं में से कोई वस्तु न हो अथवा न मिले तो हाथ से दबा रखना चाहिए।

इस ढँग से शिरा या धमनी के रुधिर को बहते हुए केवल ऐसी दशा में हम रोक सकते हैं जब कि वह धमनी अथवा शिरा किसी हड्डी पर हो या उसके समीप हो, किन्तु जब यह

दोनों मांस के बहुत नीचे हों जैसे कि बाँह या जाँघ में, तो रुधिर का बहना उस समय तक बन्द नहीं हो सकता जब तक कि किसी पट्टी से भली भाँति बाँध कर अधिक दबाव न पहुँचाया जाय। इसका उपाय यह है कि पट्टी की दोहरी गाँठ में कोई पेन्सिल अथवा क़लम या लकड़ी तथा रूलर लगा कर उसे घुमाते जायँ जब तक कि रुधिर का बहना बन्द न हो जाय और फिर उसे उसी स्थान पर रख कर घाववाले अङ्ग के साथ बाँध देना चाहिए (आकृति २७)।
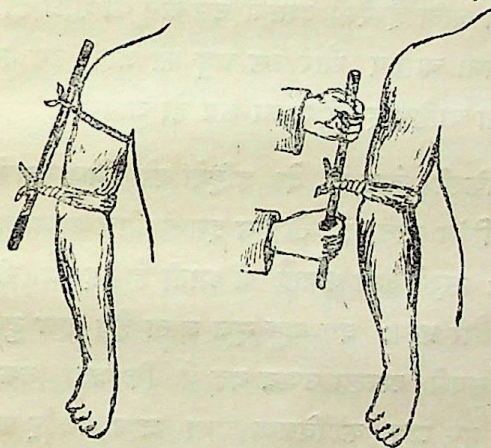
(आकृति २७)

परन्तु रुधिर को पट्टी के द्वारा रोकना प्रत्येक अवसर पर सम्भव नहीं होता, जैसे जब रुधिर गर्दन या धड़ के किसी भाग से बह रहा हो, ऐसी दशा में जब तक डाक्टर न आवे घाव को

अँगूठे अथवा उँगलियों से दबा कर रुधिर का बहना रोक देना चाहिए।

यदि नाक से रुधिर बहता हो तो जहाँ तक सम्भव हो सिर को पीठ की ओर रखना चाहिए और सिर, गर्दन तथा चेहरे पर लगातार ठंढा जल डालते अथवा बर्फ रखते रहना चाहिए।

कुछ घाव इस प्रकार के होते हैं कि रुधिर खाल के भीतर ही बहता रहता है और बाहर नहीं दिखाई देता। इस घटना की पहिचान यह है कि घाववाला अङ्ग तुरन्त नीले या काले रङ्ग का हो जाता है ऐसी दशा में उस अंग को शीघ्र ही ठंढे जल से धो डालना चाहिए और उस अङ्ग को जहाँ तक सम्भव हो विश्राम देना चाहिए इससे सूजन कम हो जायगी।

जब किसी जोड़ के दो हड्डियों को मिलानेवाले बन्धन अकस्मात् खिंच जाते हैं तो हम इसको मोच आना कहते हैं। मोच प्रायः टख़ने तथा कलाई में आती है। इसमें पीड़ा बहुत होती है और प्रायः वह अङ्ग सूज जाता है। इस दुख के दूर करने का सबसे अच्छा उपाय यह है कि जहाँ तक हो सके मोच खाये हुए अङ्ग को विश्राम दिया जाय अर्थात् उससे कोई काम न लिया जाय और एक पट्टी ठंढे पानी में भली भाँति भिगो कर जोड़ पर बाँध दी जाय। पट्टी को दृढ़ता से बाँधना चाहिए और बार बार ठंढा जल उस पर डालते रहना चाहिए। जब पीड़ा तथा सूजन कम होने लगे तो उस अङ्ग पर कई दिन

तक तारपीन का तेल लगाना चाहिए तत्पश्चात् हाथ से भली भाँति मलना चाहिए।

कभी ऐसा होता है कि केवल जोड़ के बन्धन खिँच ही नहीं जाते वरन् जोड़ की कोई हड्डी भी अपने स्थान से हट जाती है। ऐसी दशा में साधारण मोच की अपेक्षा पीड़ा तथा सूजन दोनों बहुत होती हैं। जब किसी जोड़ में मोच आ जाती है तो उसे यद्यपि बहुत दुख होता है किन्तु कुछ हिला जुला सकते हैं, परन्तु हड्डी के अपने स्थान से हट जाने की दशा में उस अङ्ग का हिलाना जुलाना असम्भव हो जाता है। इसके अतिरिक्त यह जोड़ बेढंगा सा हो जाता है।

जब शरीर के किसी भाग में कोई हड्डी टूट जाती है तो वह बेडौल हो जाता है। टूटी हुई हड्डी ऐसी दशा में बहुधा खाल के नीचे उभरी हुई जान पड़ती है। यदि बाँह अथवा टाँग की हड्डी टूट जाती है तो वह अङ्ग अपने सजातीय अङ्ग से छोटा जान पड़ता है।

जब यह निश्चय हो जाय कि शरीर के किसी भाग की कोई हड्डी टूट गई है अथवा अपने स्थान से हट गई है तो डाक्टर के अतिरिक्त किसी दूसरे मनुष्य को उसमें हाथ नहीं डालना चाहिए। ऐसी दशा में डाक्टर को ही तुरन्त बुलाना चाहिए, यदि कोई डाक्टर न मिल सके तो तुरन्त रोगी को किसी पास के अस्पताल में ले जाना चाहिए, किन्तु स्मरण रहे कि रोगी को वहाँ से ले चलने के पहिले चोट खाये हुए अङ्ग को इस प्रकार टिका देना चाहिए कि टूटी हुई या खिसकी हुई हड्डी

मार्ग में किसी प्रकार हिलने जुलने न पावे, नहीं तो रोगी को अत्यन्त कष्ट होगा और घाव भी बढ़ जायगा ।

आकृति २८

बाँह तथा टाँगों की हड्डियाँ प्रायः टूटा करती हैं । यदि बाँह की हड्डी टूट जाय तो उसे पहिले लकड़ी के दो चपटे टुकड़ों अथवा छातों या छड़ियों के बीच में रख कर पट्टियों से भली भाँति कस कर बाँध देना चाहिए । (आकृति २८)

जब बाँह उचित रीति से पट्टियों द्वारा बाँध दी जाय तो पगड़ी अथवा किसी कपड़े के बड़े टुकड़े द्वारा गले से लटका देना चाहिए जिससे वह हिलने जुलने न पाये (आकृति २८) ।

यदि कलाई की कोई हड्डी टूट जाय तो दो पट्टियों के बदले तीन पट्टियाँ बाँध कर (आकृति २६) बाँह की भाँति किसी कपड़े के द्वारा लटका देना चाहिए।

आकृति २६

यदि टाँग की कोई हड्डी टूट जाय तो तीन पट्टियाँ बाँध कर लकड़ी के टुकड़ों इत्यादि के साथ दोनों टाँगों को परस्पर बाँध देना चाहिए (आकृति ३०)। इससे रोगी की टाँग हिलने जुलने न पायेगी, किन्तु स्मरण रहे कि किसी दशा में पट्टी ठीक उसी स्थान पर नहीं बाँधनी चाहिए जहाँ से हड्डी टूटी हो।
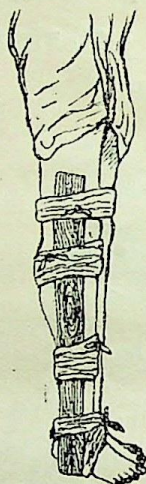
आकृति ३०

जब हँसली टूट जाय तो जिस ओर से टूटी हो उस ओर की बाँह को तुरन्त किसी कपड़े के द्वारा गर्दन से लटका देना चाहिए और किसी कपड़े की गद्दी बग़ल में रख कर बाँह से शरीर को मिला कर किसी चौड़ी पट्टी से कस कर बाँध देना चाहिए।

जब टूटी हुई हड्डी इस प्रकार बाँध दी जाय कि वह हिल जुल न सके तो रोगी को खाट या डोली में लिटा कर उसके घर अथवा अस्पताल में ले जाना चाहिए।

परन्तु जब किसी टूटी हुई हड्डी के सिरे मांस तथा खाल से

बाहर निकल आयें तो यह दशा वास्तव में कठिन तथा भयानक हो जाती है। कारण यह है कि ऐसी दशा में रोगों के कीड़े और विषैले तत्त्व सुगमता से घाव के भीतर चले जाते हैं और रुधिर में मिल कर अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न कर देते हैं। ऐसी दशा में पहिले घाव को कुछ कुछ गर्म जल से साफ़ करें और फिर रुई की गद्दी खौलते हुये जल में भिगो कर घाव पर रक्खें और ऊपर से नर्म पट्टी बाँध दें।

यदि किसी लड़के के वस्त्रों में आग लग जाय तो उसे तुरन्त भूमि पर लिटा कर कोई कम्मल अथवा कोई और मोटा वस्त्र उस पर डाल देना चाहिए इससे आग बुझ जायगी।

शरीर के जिन भागों में आग का प्रभाव पहुँचा हो उनसे कपड़ों को धीरे से उतार लेना अथवा कतरनी से काट डालना चाहिए। ऐसा करने से उसकी खाल न उतर आयगी। कपड़े उतारते ही अलसी या नारियल का तेल और चूने का जल बराबर परिमाण में मिला कर उसमें रुई अथवा साफ़ चिथड़ों का मोटा परत भली भाँति भिगो कर जले हुए स्थान पर रखना चाहिए, जिससे उस स्थान को वायु न लगे।

गाँव में प्रति वर्ष विशेषकर वर्षा ऋतु में बहुत से लोग डूब कर मर जाते हैं। जब कोई मनुष्य डूबा हुआ जल से ऐसी दशा में निकाला जाय कि वह अचेत हो किन्तु मरा न हो तो सम्भव है कि फिर वह सचेत हो जाय और न मरे इसलिए हमको यह जानना अति आवश्यक है कि ऐसी दशा में क्या करना चाहिए।

डूबे हुए को जल से बाहर निकालते ही पहिले किसी डाक्टर को बुलाना चाहिए और कुछ सूखे वस्त्र तथा कम्बल उसे गर्म रखने के लिए मँगाना चाहिए, साथ ही गोले और कमर पर के वस्त्र ढीले करना चाहिए और नाक तथा मुँह से मिट्टी इत्यादि निकाल देना चाहिए। तत्पश्चात् उसे चित्त लिटा कर और उस की छाती के नीचे एक छोटा सा तकिया अथवा परत किया हुआ वस्त्र रख कर उसके कंठ तथा कपड़ों से जल निकालना चाहिए। उसकी कमर के चारों ओर हाथ डाल कर उसको एक दो मिनट के लिए उठाने से जल सुगमता से निकलेगा।

फिर उसे औंधा लिटा कर देखना चाहिए कि साँस लेता है या नहीं। यदि साँस लेना बन्द नहीं हुआ हो तो उसे गर्म करने और रुधिर सञ्चार को वेग से चलने के लिए उसके सम्पूर्ण शरीर को नीचे से ऊपर की ओर भली भाँति मलना चाहिए, किन्तु यदि साँस लेना बन्द हो गया हो तो कृत्रिम रीति से साँस लिवाने का उद्योग करना चाहिए।

इसके पश्चात् उसे चित्त लिटा कर उसके कंधों की हड्डियों के नीचे तकिया अथवा कोई वस्त्र लपेट कर रखना चाहिए जिससे छाती कुछ ऊँची और सिर नीचा हो जाय। फिर निकटवालों में से कोई उसकी जीभ पकड़े रहे जिससे रोगी उसे पीछे की ओर खींच कर साँस की नाली का मुँह बन्द न करले। एक और मनुष्य उसकी टाँगों को खींच कर सीधी

रक्खे। अब घुटनों पर खड़े होकर और उसके सिर की ओर झुक कर उसकी दोनों बाँहों को कुहनियों के पास से पकड़ कर लगभग २ मिनट तक उसकी छाती पर भली भाँति दबाना चाहिए। इससे उसके फेफड़े सिकुड़ जायेंगे और अशुद्ध वायु उनसे निकल जायगी। इसके पश्चात् तुरन्त दोनों बाँहों को धीरे से उसके सिर की ओर ले जाना चाहिए। जब दोनों कुहनियाँ भूमि से जा लगें और बाँह धड़ के साथ समानान्तर हो जायें तो २ मिनट तक इसी प्रकार दबाये रहना चाहिए। ऐसा करने से पसलियाँ ऊपर को उठेंगी और छाती के फैलने से कुछ वायु फेफड़ों में प्रवेश करेगी। अतः जब तक साँस अपने आप भली भाँति चलने न लगे प्रत्येक मिनट में यही सिकोड़ने तथा फैलाने की क्रिया पन्द्रह अथवा बीस बार करते रहना चाहिए। जब साँस चलने लगे तो भी ध्यान से देखते रहना चाहिए कि बीच में बन्द तो नहीं हो जाती, यदि बन्द हो जाय तो तुरन्त उपर्युक्त क्रिया फिर करनी चाहिए, जिससे साँस बराबर आती जाती रहे।

अब भीगे कपड़े उतार कर और सूखे गर्म कपड़ों में लपेट कर फिर सम्पूर्ण शरीर को नीचे से ऊपर की ओर भली भाँति मलना चाहिए जिससे वह गर्म हो जाय और रुधिर-सञ्चार भी वेग से होने लगे। इसका एक और उपाय यह है कि गर्म कम्बल ओढ़ा दें अथवा गर्म जल की भरी हुई बोतलें दोनों बग़लों में हाथ पाँव के दोनों तलुओं पर रक्खे। इसके पश्चात् उसे कुछ

गर्म गर्म दूध पिलाएँ और फिर किसी समीप के घर में ले जाकर कुछ देर के लिए सुलाएँ।

यदि किसी मनुष्य को कोई पागल कुत्ता काट ले और उसका तुरन्त ही कोई प्रबन्ध न किया जाय तो वह मनुष्य मर जायगा। दो तीन दिन के भीतर उस मनुष्य को **कसौली** भेज देना चाहिए। रेल का किराया इत्यादि गवर्नमेंट से मिलता है और केवल दो सप्ताह के लिए वहाँ रहना पड़ता है।

यदि कुत्ता पागल न हो तो घाव को साफ़ तथा गर्म जल से धोकर एक साफ़ वस्त्र रख कर एक पट्टी से बाँध देना चाहिए।

साँप, कनखजूरे तथा बिच्छू के काटने तथा डंक मारने की दशा में डाक्टर को तुरन्त बुलाना चाहिए और जब तक डाकृर आवे दो रूमालों से घाव से कुछ दूर पर तथा नीचे कुछ दूरी पर कस कर बाँध देना चाहिए, जिससे विष रुधिर में मिल कर शरीर में न फैल जाय। इसके पश्चात् कोई मनुष्य जिसके मुँह में कोई रोग अथवा घाव न हो, घाव को चूसे और चूस कर रुधिर को थूक दे और अपना मुँह गर्म जल तथा बरांडी इत्यादि से धो डाले। घाव को अत्यन्त गर्म लोहे से जला देना भी प्राय: बहुत उपयोगी होता है, किन्तु किसी दशा में रोगी को समीपस्थ अस्पताल में अथवा किसी समीपी डाकृर के पास ले जाने में विलम्ब न करना चाहिए।

बर्र, मधुमक्खी तथा चिऊँटी इत्यादि के डंक मारने की

दशा में सबसे अच्छा उपाय यह है कि नौसादर और चूने के स्वच्छ जल को भली भाँति मिला कर उससे धोवें यदि यह वस्तुयें न मिल सकें तो प्याज़ का एक टुकड़ा अथवा कुछ गीली सुँघनी या तम्बाकू लेकर उस पर भली भाँति मलें। यदि डंक खाल में रह जाय तो तुरन्त एक छोटी सी ताली की नली उस पर रख कर और दबा कर निकाल लेना चाहिए।

यदि कोई वस्तु नाक, आँख अथवा कान में चली जाय तो उसे निकालने के लिए किसी यन्त्र का प्रयोग करना ठीक नहीं है। यंत्र का प्रयोग केवल डाक्टर ही कर सकते हैं।

यदि आँख में कुछ पड़ जाय तो रूमाल के कोने से सुगमता से निकाल सकते हैं। कभी कभी शुद्ध तथा कुछ गर्म जल से भी आँख स्वच्छ हो जाती है, किन्तु किसी दशा में आँख को मलना न चाहिए।

यदि कोई वस्तु कान में चली जाय तो वह कभी कभी पिचकारी के द्वारा गर्म जल डाल कर निकाली जा सकती है और यदि कोई कीड़ा-मकोड़ा कान में चला जाय तो तेल की कुछ बूँदें डाल कर उसे मार डालना चाहिए।

यदि कोई वस्तु नाक में घुस जाय तो दूसरे नथुने को उँगली से बन्द करके छींकने से सुगमता से वह निकाली जा सकती है।

सातवाँ अध्याय

वायु, जल तथा भोजन

प्रत्येक मनुष्य जानता है कि हमारे लिए वायु कैसी आवश्यक वस्तु है। वायु के बिना हम कुछ मिनट भी जीवित नहीं रह सकते। पहिले भाग के चौथे अध्याय में हमने वायु के उपयोगी होने की कुछ बातें बताई थीं। वायु फेफड़ों में जाकर रुधिर में मिल जाती है और शरीर के निकम्मे अंशों को क्रमशः जला कर अन्त में अशुद्ध वायु के रूप में निकाल देती है। यदि वायु जो साँस के द्वारा भीतर जाती है ऐसी शुद्ध न हो जैसी कि चाहिए, तो वह शरीर के निकम्मे अंशों को दूर न कर सकेगी और रुधिर धीरे धीरे मैला होता जायगा। अतएव यह आवश्यक है कि जो वायु साँस के द्वारा शरीर के भीतर जाय वह अत्यंत शुद्ध हो, किन्तु खेद का अवसर है कि प्रायः लोग इस बात पर विशेष ध्यान नहीं देते। वायु के अशुद्ध होने के बहुत से कारण हैं और यदि उचित उपाय न किया जाय, तो सम्भव है कि लोग अनेक प्रकार के रोगों से ग्रसित हो जायँ। जो अशुद्ध वायु साँस के द्वारा बाहर निकलती है वह हमारे सन्निकट की शुद्ध

वायु में मिल जाती है और धीरे धीरे उसको अधिक मैला कर देती है। केवल हमारे साँस लेने से ही वायु अशुद्ध नहीं होती, बरन् दीपक तथा अग्नि के जलने से भी मैली होती रहती है। एक साधारण दीपक के जलने से इतनी वायु अशुद्ध हो जाती है जितनी कि चार मनुष्यों के साँस लेने से हो जाती है। अतः जिस कमरे से अशुद्ध वायु के निकलने का कोई प्रबन्ध न किया गया हो उसमें अग्नि तथा दीपक जला कर बहुत से लोगों का बैठना हानि-कारक है।

और और मैलों से भी जो फेफड़ों, खाल, मैले मुँह, मैले दाँतों तथा मैले कपड़ों से निकलते हैं वायु अशुद्ध होती रहती है। वायु की यह अशुद्धता उस दुर्गन्धि से पहिचानी जा सकती है, जो उस समय जान पड़ती है जब कि कोई मनुष्य शुद्ध वायु से ऐसे कमरे में प्रवेश करे जिसमें बहुत से लोग बैठे हों।

शुद्ध तथा स्वच्छ वायु में साँस लेने के हेतु हमको कोई ऐसा प्रबन्ध करना चाहिए जिससे बुरी तथा अशुद्ध वायु तथा अन्य मैल जो हमारे शरीर से तथा अग्नि और दीपक के जलने से उत्पन्न होते हैं कमरों से बराबर निकलते रहें और बाहर से शुद्ध वायु भीतर आती रहे। यह किस प्रकार होगा इस पर हम अपनी सम्मति पहिले ही दे चुके हैं।

मैली अशुद्ध वायु तथा भिन्न भिन्न प्रकार के और मैले अधिकतर कूड़ा करकट के सड़ने से तथा नालियों और मैले जल के गढ़ों, पाख़ानों, दलदलों तथा गौशाला इत्यादि से ही

अधिकता से उत्पन्न होते हैं। ऐसे स्थानों से वायु अस्वच्छ हो जाती है तथा दुर्गन्ध उत्पन्न होती है, यही नहीं बरन् अनेक प्रकार के रोगों के कीड़े भी यहाँ से उत्पन्न होते हैं। यह कीड़े वायु में फैल कर अनेक प्रकार के रोगों के फैलाने का कारण होते हैं। यह कीड़े विशेषकर गंदे तथा मैले स्थानों में रहते हैं। इन्हीं कीड़ों से प्रायः चेचक, ख़सरा, शीतला, आँव, प्लेग, क्षयी तथा आँख और त्वचा के रोग उत्पन्न होते हैं। इसलिए यह अति आवश्यक है कि जहाँ तक सम्भव हो वायु स्वच्छ हो और उसमें ऐसे कीड़े मिले न रहें। इसका सुगम उपाय यह है कि घर, पाख़ाने, नालियाँ तथा उनके सन्निकट के स्थान सदैव साफ़ रक्खे जायँ। अतः हमारा धर्म है कि हम निकम्मी वस्तुयें तथा सड़े गले पदार्थ अपने घरों के पास न रहने दें, बरन् इनको इतनी दूर फेंकवायें कि हमारे घरों के सन्निकट की वायु मैली तथा अशुद्ध न होने पाये। यदि मैला जल रहने के स्थानों के पास कोई खड़ा रहे तो उससे भी बहुत हानि पहुँचती है। कारण यह है कि उसमें मच्छर उत्पन्न हो जाते हैं जिनके काटने से प्रायः जूड़ी मनुष्यों में फैल जाती है अतः घर के पास कोई ऐसी वस्तु न रहने देना चाहिए जिससे दुर्गन्ध, अशुद्ध वायु, रोगों के कीड़े अथवा अन्य, विषैले पदार्थ उत्पन्न हों।

पाठशाला तथा रहने के स्थानों को आर्द्र न रखना चाहिए और न इनमें अँधेरा रखना चाहिए, क्योंकि ऐसे ही घरों में रोगों के कीड़े अपना घर बना लेते हैं। पाठशाला अथवा घर का प्रत्येक

कमरा ऐसा होना चाहिए जिसमें वायु तथा प्रकाश भली भाँति आता हो। स्मरण रहे कि धूप से प्रत्येक प्रकार के रोग के कीड़े मर जाते हैं।

धूल तथा मिटी से युक्त वायु भी बहुत हानिकारक होती है। कारण यह है कि इस वायु के साथ अनेक प्रकार के विष तथा रोगों के कीड़े भी मिट्टी के साथ भीतर चले जाते हैं। इसके अतिरिक्त स्वयं धूल मिट्टी इत्यादि भी जब अधिक परिमाण में फेफड़ों में वायु के साथ जाती है, तो इससे भी फेफड़ों के भिन्न भिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिए हमको चाहिए कि धूल-मिट्टी से मिली वायु में साँस न लें अर्थात् ऐसे स्थान पर न जायँ और न ऐसी वायु को घर के भीतर आने दें। यही नहीं, पीने के जल तथा भोजन के पदार्थों को भी ऐसी वायु से बचाये रखना चाहिए।

यह बात सबको भली भाँति ज्ञात है कि बिना जल के हमारा काम नहीं चल सकता। संसार में उपयोगी तथा आवश्यक वस्तुओं में मनुष्य-मात्र के लिए वायु के पश्चात् जल की गणना है। हमारे शरीर में जितना बोझ है उसका $\frac{3}{4}$ भाग जल है। जल का कुछ भाग तो वनस्पति और दूसरे भोजन के पदार्थों के द्वारा और अधिकांश पीने के जल के द्वारा शरीर में आता है।

यदि उस जल में जो पीने तथा भोजन बनाने में प्रयोग किया जाता है रोग के कीड़े तथा अन्य विष हों, तो इसमें सन्देह

नहीं कि यह रुधिर में मिल कर भिन्न भिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न कर देंगे। अतः हैज़ा, दस्त, आँव तथा जूड़ी इत्यादि भिन्न भिन्न प्रकार के रोग जल के कीड़ों तथा अन्य मैलों से उत्पन्न होते हैं।

इसलिए हमको उचित है कि पीने तथा भोजन बनाने के लिए शुद्ध जल सदा उपस्थित रक्खें, किन्तु बहुत से मनुष्य ऐसे हैं कि न तो इस बात का विचार करते हैं कि जो जल प्रयोग किया जा रहा है वह स्वच्छ है या नहीं और न उसे मैल से बचाने का उद्योग करते हैं।

जल प्रायः कुओं, तालाबों तथा नदियों से लिया जाता है। बरसाती जल का एक भाग तो पृथ्वी के भीतर बड़ी गहिराई तक चला जाता है, यहाँ तक कि वह पृथ्वी के भीतर ऐसे स्थान पर पहुँच जाता है कि उसका छनना बन्द हो जाता है और फिर वह नीचे नहीं जा सकता। यही वह जल है जो हमको कुओं से प्राप्त होता है। परन्तु शेष जल जो पृथ्वी के धरातल पर बहता है उससे तालाब और नदियाँ भरती हैं।

कुयें का जल प्रायः इस प्रकार अस्वच्छ हो जाता है कि उसमें वह मैला जल जिसमें पशुओं के मैल मूत्र और अन्य निकृष्ट वस्तुयें मिली होती हैं, सन्निकट की नालियाँ, पाख़ानों, क़ब्रिस्तानों से धीरे धीरे पृथ्वी के भीतर छनता हुआ अन्त में नीचे जाकर कुयें के जल में मिल जाता है। इस प्रकार अनेक रोगों के कीड़े भी जो मैले स्थानों में रहना चाहते हैं कुयें में चले जाते हैं। अतः यह अति आवश्यक है कि कुयें पक्के हों

तथा उनकी दीवारों की ईंटें चूने के सहित जुड़ी हों, जिससे पृथ्वी के ऊपर का मैला जल उनमें न जा सके। यदि कुयें की दीवार फट गई हो तो उसको बनवा लेना चाहिए। इसलिए यह आवश्यक है कि कुयें कदापि कच्ची नालियों, मैले जल के गढ़ों, पाख़ानों और मवेशीख़ानों इत्यादि के समीप न हों।

यह अति आवश्यक है कि कु ें के चारों ओर कुछ दूर तक ढालू और पक्की भूमि हो, जिससे स्नान करने तथा कपड़े धोने का मैला जल पृथ्वी में छन कर फिर कुयें में न चला जाय। इस ढालू भूमि के चारों ओर एक पक्की नाली भी अवश्य होनी चाहिए जिससे सम्पूर्ण मैला जल बह कर कुयें से दूर चला जाय।

कुयें का जल धूल मिट्टी इत्यादि पत्तियों और अन्य मैलों से भी जो ऊपर से गिरती हैं मैला हो जाता है। इसलिए कुयें पर एक हलका सा सायबान इन सबको रोकने के लिए बनवा लेना चाहिए।

मैले बरतन तथा मैली रस्सियाँ जल निकालने में प्रयोग न करनी चाहिए। वर्ष में कम से कम एक या दो बार कुयें को भली भाँति साफ़ करना चाहिए। स्मरण रहे कि गहिरे कुयें का जल प्राय: स्वास्थ्य के लिए अच्छा होता है।

तालाब भी नालियों और अन्य मैले स्थानों के जल के बह कर आ मिलने से कुओं की भाँति मैले हो जाते हैं। बहुधा लोग मैले कपड़े और अन्य मैली वस्तुयें उनमें धोते हैं। उनके भीतर

पशु घुस कर जल पीते हैं। इससे तालाबों का जल गँदला हो जाता है और उसी को लोग भोजन बनाने और पीने में प्रयोग करते हैं। इसलिए इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि जिस तालाब का जल पीने के काम में लाया जाय उसे प्रत्येक प्रकार के मैल से बचाये रक्खें।

नदियाँ भी तालाबों के सदृश मैली हो जाती हैं, किन्तु उनका मैल जल के साथ बह जाता है, एक स्थान पर सड़ता नहीं रहता जैसा कि तालाबों में सड़ता रहता है। इसके अतिरिक्त नदियों का कुछ मैल वहाँ के जीव-जन्तु भी खा जाते हैं।

नदियों के किनारों को सदैव साफ़ रखना चाहिए इसके पास मुर्दों को जलाना तथा गाड़ना उचित नहीं है विशेषकर ऐसे स्थान पर जहाँ से लोग आगे बढ़ कर प्राय: जल लेने के लिए आते हैं। किनारे पर के नगरों तथा गावों से नदियों में अनेक प्रकार की निकृष्ट वस्तु तथा निवासियों के मल मूत्र मिल जाते हैं अत: ऐसे स्थान के जल से सदा बचना चाहिए।

वर्षा ऋतु में नदियों और तालाबों का जल अधिक मैला तथा गँदला हो जाता है। ऐसे जल में अनेक प्रकार के मैल सम्मिलित रहते हैं, इसलिए ऐसे जल का प्रयोग वर्जित है। यदि ऐसे जल को पीने तथा भोजन बनाने के लिए लेना हो तो उसे पहिले साफ़ कर लेना चाहिए। इसका सुगम उपाय यह है कि इस जल में थोड़ी सी फिटकरी मिला दी जाय इससे कुछ

घंटों के पश्चात् मिट्टी तथा अन्य मैल जल के पात्र के तल में बैठ जायेंगे।

यदि किसी साफ़ पत्थर पर कुछ जल में निर्मली घिस कर मैले जल में मिला दी जाय तो मिट्टी तथा मैल नीचे बैठ जायगा।

पीने तथा भोजन बनाने के सब पात्रों को सदा स्वच्छ रखना चाहिए। इन कार्य्यों के लिए जो जल रक्खा जाय उसे एक दिन से अधिक न रखना चाहिए। प्रति दिन ताज़ा जल प्रयोग किया जाय।

जिस समय हैज़ा, दस्त अथवा आँव या ऐसे और संक्रामक रोग फैल रहे हों तो जल को दस पन्द्रह मिनट तक उबाल लेना चाहिए तब इसका प्रयोग किया जाय। इसका फल यह होगा कि प्रत्येक भाँति के कीड़े जो जल में होते हैं मर जायँगे, किन्तु स्मरण रहे कि उबालने के पश्चात् जल को अधिक समय तक खुला न रहने देना चाहिए नहीं तो रोगों के कीड़े उसमें फिर आ जायँगे।

स्वच्छ तथा निर्मल जल जैसा पीने तथा भोजन बनाने के लिए आवश्यक है वैसा ही स्नान करने तथा वस्त्र धोने के लिए भी है। वर्षा ऋतु में जो मैला जल गढ़ों तथा तालाबों में एकत्रित हो जाता है उसमें नहाना अथवा वस्त्र धोना अनुचित है। स्नान करने तथा वस्त्र धोने का उद्देश्य यह है कि शरीर से निकला हुआ मैल कुचैल दूर हो जाय, किन्तु यदि हम मैले जल में नहायें धोयें तो शुद्ध होना तो दूर रहा और भी अधिक मैले हो जायँगे।

इसलिए अपने शरीर तथा वस्त्रों को स्वच्छ रखने के लिए हमें नित्य नहाना धोना चाहिए और इसके लिए सदा स्वच्छ जल का प्रयोग करना चाहिए।

हमारे जीवन का आधार जल के पश्चात् भोजन है। हम पहिले बता चुके हैं कि हमको नित्य भोजन करना इसलिए आवश्यक है कि हमारे शरीर के जो अंश चीण होते रहते हैं उनकी पूर्त्ति होती रहे। भोजन का वह भाग जिससे शरीर का पालन-पोषण होता है रुधिर ले लेता है और इस प्रकार शरीर के सम्पूर्ण भागों के नष्ट हुए अंशों की पूर्त्ति हो जाती है। यदि भोजन में रोगों के कीड़े अथवा किसी प्रकार के विष सम्मिलित हों तो वह रुधिर में मिल कर उसको धीरे धीरे विषैला कर देंगे, जिससे भिन्न भिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न हो जायँगे और सम्भव है कि मनुष्य की मृत्यु का कारण हो जायँ।

अतः इस बात का ध्यान आवश्यक है कि हम कैसा भोजन करें और यह भी कि भोजन के ऐसे पदार्थ जैसे कि तरकारी, फल, मांस, मछली इत्यादि जहाँ तक सम्भव हो स्वच्छ हों।

यदि कोई पदार्थ सड़ जाय और उससे दुर्गन्ध आती हो तो उसे कदापि न खाना चाहिए। ऐसे सड़े पदार्थों से भिन्न भिन्न प्रकार के रोगों के कीड़े अधिक उत्पन्न होते हैं। मांस तथा मछली में इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए। कारण यह है कि इनमें सड़ने का काम शीघ्र ही आरम्भ हो जाता है और भिन्न भिन्न प्रकार के संक्रामक कीड़ों का उत्पन्न होना भी इनमें सम्भव

है। यदि इनके प्रयोग से पहिले इनमें दुर्गंध की कुछ भी शङ्का हो तो इनको कदापि न खाना चाहिए।

तरकारी, चावल, दाल, मांस, मछली, फल तथा अन्य भोज्य पदार्थ भोजन के पूर्व ही स्वच्छ जल से धो लेना चाहिए। सम्भव है कि उनमें छोटे छोटे कीड़े तथा उनके अंडे वर्त्तमान हों और उनसे भिन्न भिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न हो जायँ।

भोजन सदा भली भाँति पका हुआ होना चाहिए जिससे सुगमता से पच सके। अच्छी तरह पकने से संक्रामक कीड़े मर जाते हैं। दूध बिना उबाले कभी पीना न चाहिए, क्योंकि सम्भव है कि गाय के रोग के कीड़े उसमें मिल गये हों। दूध को उबालने के पश्चात् सदा ढका रखना चाहिए।

भोज्य पदार्थों को पकाने के पश्चात् पात्रों को सदैव धो डालना चाहिए और पाकशाला को भी सदा साफ़ और सुथरा रखना चाहिए।

माता पिता, अध्यापकों तथा अन्य सम्बन्धियों को विशेष कर इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि बालक कई दिन का बचा हुआ भोजन, सड़ी हुई मिठाइयाँ तथा ऐसे और पदार्थ मोल लेकर न खाने पायें। मोल लिये हुए पदार्थ चाहे वह तत्काल ही के बने हुए क्यों न हों ऐसे समय में कदापि न खाना चाहिए जब कि हैज़ा, प्लेग अथवा अन्य कोई संक्रामक रोग फैला हुआ हो।

उपर्य्युक्त नियमों के पालन करने पर भी यदि कोई मनुष्य बिना भूख प्यास के भोजन करेगा अथवा क्षुधा से अधिक भोजन करेगा तो वह अवश्य रोग से ग्रसित हो जायगा। इसी प्रकार यदि परिमाण से कम भोजन करेगा तो निर्बल हो जायगा। यदि कोई मनुष्य कुछ कुछ समय के अनन्तर बार बार भोजन करेगा अथवा जब कि पहिला भोजन पचा भी नहीं उस पर और भोजन कर लेगा तथा भोजन नियत समय पर न करेगा तो उसका स्वास्थ्य अवश्य बिगड़ जायगा। अतः भोजन सदा नियत समय पर और इच्छानुकूल करना चाहिए।

वायु, जल तथा भोजन की स्वच्छता के विषय में हमने जो कुछ नियम ऊपर बताये हैं उनका पालन यदि कोई अध्यापक पूर्णतया करेगा, तो वह अपना ही स्वास्थ्य नहीं वरन् अपने शिष्यों का भी स्वास्थ्य भली भाँति स्थिर रख सकेगा।

———